खाकी राजनीतिक पुलिसिंग में सर के बल खड़ा होता है कानून

विकास नारायण राय

समाज में यह आशंका आये दिन साक्षात दिख जायेगी कि पुलिस द्वारा कानून का तिरस्कार कहीं नागरिकों द्वारा पुलिस के तिरस्कार में न बदल जाए। लोकतांत्रिक आन्दोलन से एक विभाजक शासन का आमना-सामना होने पर पुलिस के लिए इस कसौटी पर खरा उतरने की चुनौती और भी बढ़ जाती है। उसे अपने पेशेवर आचरण के मीन-मेख के साथ-साथ सत्ता पक्ष के राजनीतिक दबाव की छान-बीन से भी गुजरना होता है। मसलन, तमाम जानकार हलको में दिल्ली दंगे के पुलिस निष्कर्षों को कानून को सर के बल खड़ा करने जैसा बताया जा रहा है। राजनीतिक पुलिसिंग का ऐसा बेशर्म आयाम बेशक इस व्यापक पैमाने पर रोज न भी दिखे लेकिन इसमें नया कुछ नहीं।

आम नागरिक प्राय: कानून का पालन करना चाहेगा। इसके लिए कानूनों का सहज और स्पष्ट होना सभी के लिए फायदेमंद है। पुलिसवालों ने, जिनके कंधों पर कानून-व्यवस्था को लागू कराने का भार होता है, कानून पढ़ा होता है, आम नागरिक ने नहीं। इसलिए, पुलिस पर आयद है कि कानून पालना की कवायद को यथासंभव एक-सार और सुगम रखा जाए जिससे लोगों के मन में किसी भ्रान्ति की गुंजाइश न रहे। यह समीकरण वैसे ही है जैसे किसी चौक पर यदि लाल बत्ती के जलने-बुझने के सामान्य क्रम में गड़बड़ी आ जाए तो वहां यातायात में अफरा-तफरी मच जाना स्वाभाविक है।

बड़ोदरा, गुजरात में 29 वर्षीय ड्राइवर शैलेश वनकर 15 सितंबर रात काम के बाद हर रोज की तरह मोटर साइकिल से वापस अपने गाँव जा रहा था। अँधेरे में उसकी मोटर साइकिल सड़क के बीच सो रही गाय से टकरा गयी और इस दुर्घटना में आयी गंभीर चोटों से उसकी अस्पताल में मृत्यु हो गयी। वह चार भाई-बहनों में सबसे छोटा था। लेकिन अगले दिन पुलिस ने उसी के खिलाफ लापरवाही से ड्राइविंग का मुकदमा दर्ज कर दिया जबकि गुजरात पुलिस एक्ट की धारा 90 ए के मुताबिक पशु को इस तरह सड़क पर छोड़ना अपराध है। वड़ोदरा म्युनिसिपल कारपोरेशन के स्वास्थ्य अधिकारी आवारा छोड़े गए पशु मालिकों के विरुद्ध मुकदमे दर्ज भी कराते आये हैं। तब फिर पुलिस ने शैलेश के मामले में उलटी गंगा क्यों बहायी? क्या इससे कानून की पालना को लेकर नागरिकों के मन में असमंजस की स्थिति नहीं बनेगी?

जाहिर है, उपरोक्त वड़ोदरा प्रसंग में स्थानीय पुलिस किसी न किसी तरह के दबाव में काम कर रही होगी। लेकिन कानून लागू करने वाली एजेंसी के लिए यह आदर्श स्थिति नहीं कही जायेगी। ऐसे ही रोजमर्रा के उदाहरणों से बाद में पुलिस के नागरिकों से टकराव के रास्ते निकलते हैं न कि उनसे सहयोग मिल पाने के। पुलिस के लिए कानून का मखौल उड़ाना अंतत: स्वयं अपना मखौल उड़ाना ही बन जाता है।

क्या आज किसान आंदोलनकर्ताओं के खिलाफ़ भी शासन की ओर से वैसे ही तिरस्कार युक्त तर्क नहीं दिए जा रहे हैं जैसे गुजरी सर्दियों में नागरिकता संशोधन कानून आंदोलन में शामिल लोगों के खिलाफ़ हुआ करते थे? अब आंदोलित किसानों को 'गुमराह' से 'राष्ट्रद्रोही' तक बताया जा रहा है, तब आंदोलित मुसलमानों को सम्बोधित करने के लिए भी ऐसे ही विशेषण इस्तेमाल होते थे। यानी, क्या पुलिस एक बार फिर राजनीति और कानून के दोराहे पर नजर आएगी?

फिलहाल चल रहे किसान आंदोलन में सड़कें भी रोकी गयी हैं और छिट-पुट हिंसा भी हुयी है। इस पहलू पर मोदी राज के पक्ष में सर्वाधिक वोकल रही फिल्म स्टार कंगना रनौत का बयान दिल्ली पुलिस को नंगा करने जैसा ही समझिए। जिस कदर सतही और लोकतंत्र विरोधी कंगना का बयान है, उसी टक्कर का राजनीतिक धक्केशाही वाला आचरण दिल्ली दंगों के दौरान और सम्बंधित केसों के इन्वेस्टीगेशन में दिल्ली पुलिस का भी रहा है।

कंगना के मुताबिक़ जो भी मोदी सरकार द्वारा पारित तीन किसान ऐक्ट का मुखर विरोध कर रहा है, वह आतंकवादी हुआ और उसका यूएपीए में चालान किया जाना चाहिए। यानी, कहीं यदि आन्दोलन में कोई हिंसा हो जाए तो राजनीतिक विरोधियों को भी षड्यंत्रकारी बनाकर बाँध दो! दिल्ली पुलिस ने भी फ़रवरी दंगों के मामलों में यही तो किया जब हिंसक दंगाइयों पर कार्यवाही से इतर उन्होंने सीएए-एनआरसी का मुखर विरोध करते आ रहे तमाम ऐक्टिविस्ट को भी षड्यंत्र की झूठी कहानी गढ़ कर दंगों से नत्थी कर दिया। ऐसा भी नहीं कि कंगना रनौत के कहे ने किसी बहुत बड़े रहस्य से पर्दा उठाया हो। अमित शाह निर्देशित पुलिस के राजनीतिक इस्तेमाल का यह शैतानी आयाम जाहिर तो था ही और इसे लेकर तमाम जागरूक नागरिकों, समाजकर्मियों, कानूनविदों ही नहीं स्वयं वरिष्ठ पुलिसकर्मियों के बीच भी दिल्ली पुलिस की कड़ी आलोचना चलती रही है। लेकिन बिहार चुनाव के सुशांत सिंह राजपूत अध्याय में भाजपा रणनीति का मुखौटा बन कर उभरी कंगना रनौत के वोकल होने ने पुलिस के राजनीतिक इस्तेमाल के उसके मंसूबे चौड़े में जग-जाहिर कर दिए।

मोदी सरकार ने लोकसभा में माना है कि लॉकडाउन में मार्च से जून के बीच एक करोड़ से ऊपर श्रमिक अपने घरों को लौटे। इसके चलते 80 हज़ार से ऊपर दुर्घटना हुयीं जिनमें 29 हज़ार से अधिक लोगों ने जान गँवायी। वस्तुत: यह ऐतिहासिक त्रासदी लॉकडाउन और सरकारी हठधर्मिता की विफलता का ही ढिंढोरा थी। यानी, कानून को सिर के बल खड़ा करने से उस दौर में भी कुछ हासिल नहीं हुआ था।

भाजपा की संकीर्ण राजनीति को पोसने में पुलिस को झोंकने की महँगी कीमत पूरे देश को चुकानी पड़ेगी। फ़रवरी के दिल्ली दंगों ने एक अल्पसंख्यक लोकतांत्रिक आंदोलन के राजनीतिक दमन के दूरगामी परिणामों की ओर चेताया था; अब किसान और श्रमिक वर्गों के आंदोलित होने की बारी है। देर-सवेर इनके निहितार्थ भी हमारे सामने आएँगे।

(पूर्व डायरेक्टर, नेशनल पुलिस अकादमी, हैदराबाद)

अमित शाह निर्देशित पुलिस के राजनीतिक इस्तेमाल का शैतानी आयाम जाहिर तो था ही...

दिल्ली पुलिस जाँच नहीं राजनीति कर रही

नई दिल्ली : फ़रवरी में दिल्ली में हुए साम्प्रदायिक दंगों की चार्जशीट अब अदालत में दी गयी हैं, जिनमें संदेहास्पद सूचनाओं और फर्जी गवाहियों के अलावा राजनीतिक किताबों को भी षड्यंत्र सिद्ध करने का आधार बनाया गया है। दिल्ली पुलिस की नीयत दंगों के पीछे के असली खिलाड़ियों को उजागर करने की न होकर नागरिकता संशोधन विधेयक के विरोधियों को लपेटने की लगती है।

स्वतंत्रता संघर्ष के दौर में यदि दिल्ली दंगे की जाँच करने वाली मोदी-शाह की दिल्ली पुलिस रही होती तो असहयोग आंदोलन चलाने वाले, विश्व में अहिंसा के प्रतीक स्वरूप स्वीकारे गए, गांधी जी को भी 1922 की चौरी-चौरा हिंसा के लिए फाँसी पर चढ़ना पड़ता।

अंग्रेजों में भी इतनी शर्म तो थी कि उन्होंने भी भगत सिंह को सांडर्स वध के लिए फाँसी दी थी न कि लेनिन की जीवनी पढ़ने के लिए। दिल्ली पुलिस ने तो किताबें रखने के 'जुर्म' में कई छात्र एक्टिविस्ट का दिल्ली दंगों में यूएपीए के तहत चालान किया है।

आईबी, रॉ, स्पेशल ब्रांच जैसी गुप्तचर एजेंसियों और तमाम पुलिस यूनिट की लाइब्रेरी में भी वही किताबें मिलेंगी जो शरज़ील इमाम जैसे गिरफ़्तार किए छात्रों से दिल्ली पुलिस ने दिखायी हैं। क्या दिल्ली पुलिस की नज़र में इन सरकारी संगठनों के मुखिया भी देशद्रोही हैं?

मोदी और उनके एनएसए अजित डोवाल ने पाकिस्तान जाकर नवाज़ शरीफ़ की बिरयानी खायी और मंत्रणा की, फिर पुलवामा कांड हुआ। क्या इतने भर से दिल्ली पुलिस उन्हें भी षड्यंत्रकारी बना देगी?

राष्ट्रीय गुप्त एजेंडे वाले गुप्तेश्वरों को राजनीति में आने से रोकने की जरूरत

यूसुफ किरमानी

आंखों में आईएएस, आईपीएस, आईएफएस, आईआरएस बनने का सपना लाखों युवक भारत में हर साल देखते हैं और इनमें कुछ सौ अपनी मंजिल तक पहुंच भी जाते हैं। लेकिन सिविल सेवा में आने वाले यही युवा अगर पहले से यह तय कर लें कि रिटायरमेंट के बाद उन्हें इस पार्टी की राजनीति करनी है और उसी के अनुसार अपनी पूरी सर्विस में जमीन तैयार करते रहें तो क्या होगा...।

नौकरशाही (ब्यूरोक्रेसी) में राजनीति कोई नई बात नहीं है लेकिन नौकरशाही पूरी तरह राजनीतिक हो जाए, यह गंभीर बात है। देश की सेहत के लिए इससे नए तरह के खतरे पैदा हो रहे हैं। बिहार के डीजीपी गुप्तेश्वर पांडे का पुलिस सेवा से वीआरएस लेकर राजनीति में आने की कोशिश इस खतरे का ताजा उदाहरण है।

3 जुलाई को जब यूपी के कानपुर देहात में मोस्ट वॉन्टेड विकास दूबे का जब पुलिस एनकाउंटर करने गई तो उल्टा उसके गैंग ने आठ पुलिस वालों की हत्या कर दी और सभी आरोपी फरार हो गए। विकास दूबे की फरारी को लेकर हर राज्य को अलर्ट जारी किया गया था। लेकिन सिर्फ बिहार के डीजीपी गुप्तेश्वर पांडे ने बयान दिया कि विकास दूबे में हिम्मत है तो बिहार में घुसकर दिखाए। इस बयान को मीडिया खासकर बिहार के अखबारों और चैनलों ने काफी महत्व दिया। तमाम राजनीतिक विश्लेषकों के कान उस वक्त खड़े हुए लेकिन उन्होंने इसे गुप्तेश्वर का बड़बोलापन मानकर चुप्पी साध ली। तब तक कोई नहीं जानता था कि गुप्तेश्वर अपनी राजनीतिक मंजिल की तरफ बढ़ रहे हैं। उस दौरान देश में जहां कहीं भी घटनाएं हो रही थीं, उस पर गुप्तेश्वर के निजी विचार सामने आ ही जाते थे। बिहार का मीडिया धीरे-धीरे उनके राबिनहुड बनाकर पेश करने लगा।

इससे पहले 14 जून को बॉलिवुड एक्टर सुशांत सिंह राजपूत खुदकुशी कर चुके थे। लेकिन जुलाई में चूंकि विकास दूबे का मामला गरम था तो गुप्तेश्वर पांडे का कोई बयान सुशांत की मौत पर नहीं आया। लेकिन 2 अगस्त को गुप्तेश्वर अचानक नींद से जागे और कहा कि सुशांत की रहस्यमय मौत की जांच बिहार पुलिस करेगी। इसके बाद उन्होंने कुछ पुलिस अफसरों को मुंबई भेज दिया। उसके बाद पूरा मामला राजनीतिक रंग लेता गया और गुप्तेश्वर सुशांत की मौत पर राजनीति करते रहे। इसके बाद रिया चक्रवर्ती जब मामले में सामने आई तो रिया के खिलाफ भी गुप्तेश्वर ने नेताओं के अंदाज में बयान दिए। रिया ने बिहार के सीएम के बारे में कोई बयान नहीं दिया लेकिन गुप्तेश्वर पांडे का यह बयान टीवी पर आया कि 'रिया की इतनी औकात नहीं है कि वो बिहार के सीएम पर बोले।' इसके बाद रिया को जब नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो (एनसीबी) ने गिरफ्तार कर लिया तो गुप्तेश्वर पांडे ने सबसे पहले खुशी जताई और बयान दिया। अभी जब उन्होंने पुलिस सेवा से वीआरएस लेने की घोषणा की तो मात्र दस घंटे बाद सोशल मीडिया पर एक गाना सामने आया, जिसमें उन्हें बिहार का राबिनहुड बताया गया। यह आदमी कितना धूर्त है, उसके ताजा बयानों से उसकी धूर्तता का अंदाजा लगाया जा सकता है। वीआरएस लेने के अगले दिन कहा कि राजनीति में आने का कोई इरादा नहीं है। फिर सोशल मीडिया पर अपनी कहानी सुनाते हुए कहा कि बिहार की माटी के लोग तय करेंगे कि मुझे राजनीति में आना है या नहीं। लेकिन मैं सोचता हूं कि अब मैं राजनीति में आ ही जाऊं। सबसे ताजा बयान में गुप्तेश्वर ने कहा है कि मुझे 12 सीटों से चुनाव लड़ने का प्रस्ताव मिला है। मैं कहीं से भी जीत सकता हूं।

गुप्तेश्वर का पूरा घटनाक्रम बताता है कि वो योजनाबद्ध ढंग से काम कर रहे थे। उनके रिटायरमेंट में सिर्फ पांच महीने बाकी थे, तभी उन्होंने पैंतरा बदलना शुरू किया था। लेकिन उनके बयानों और एक्शन से बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार और उनकी पार्टी जेडीयू व भाजपा को सीधा फायदा पहुंच रहा था। अब जबकि वह वीआरएस ले चुके हैं तो उन्हें जेडीयू और भाजपा दोनों से टिकट का प्रस्ताव है। पहले भी आईएएस और आईपीएस अधिकारी राजनीति में आते रहे हैं, उसमें कोई उतनी बुरी बात भी नहीं है लेकिन गुप्तेश्वर ने अब आने वाले तमाम आईएएस-आईपीएस को नया रास्ता दिखा दिया है। रिटायरमेंट से पहले अपनी राजनीति प्लान कर लो।

यहां पूर्व आईपीएस और विवादास्पद व्यक्तित्व की मालकिन किरण बेदी का उल्लेख जरूरी है। पूरी ईमानदारी से कहना पड़ेगा कि बतौर आईपीएस जब किरण बेदी के तेज तर्रार होने वाले किस्से मशहूर हो रहे थे, तब तक उनके किसी एक्शन से नहीं लगता था कि वो आगे चलकर राजनीति में आ सकती हैं। उन्होंने ऐसा कोई संकेत भी भारतीय पुलिस सेवा में रहते हुए नहीं दिया था। रिटायर होने के बाद किरण बेदी एनजीओ वगैरह से जुड़ी रहीं। इसके बाद जब अन्ना हजारे का आंदोलन शुरू हुआ तो वो भी आईआरएस अरविंद केजरीवाल, पत्रकार मनीष सिसोदिया के साथ आंदोलन में शामिल हो गईं। फिर अपने दक्षिणपंथी झुकाव की वजह से उन्होंने भाजपा का दामन थाम लिया। भाजपा ने उन्हें अब पुड्डुचेरी का उपराज्यपाल बना रखा है। लेकिन राजनीति में कदम रखने के बाद उनका वह तेज तर्रारपन हवा हो गया, जिसके लिए वो मशहूर हुई थीं। बाद में तो उनके समझौतावादी बयानों और मोदी समर्थक बयानों से उनकी बची-खुची छवि भी तार-तार हो गई।

अपने समय के तेज तर्रार नौकरशाहों के नेता बनने के अनेक किस्से हैं। लेकिन गुप्तेश्वर की तरह किसी ने प्लान नहीं किया। यूपी के कई ऐसे आईपीएस-आईएएस अफसरों को मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूं जो राजनीतिक पृष्ठभूमि से होने के बावजूद राजनीति से तौबा करते रहे हैं। यहां यूपी के पूर्व आईएएस सूर्य प्रताप सिंह का उल्लेख करना चाहूंगा। अपने कार्यकाल में सूर्य प्रताप भी काफी तेज तर्रार रहे। रिटायर होने के बाद उन्होंने यूपी के मसलों पर ध्यान देना शुरू किया, उन्होंने खुलकर यूपी की भाजपा सरकार की आलोचना की। नतीजा यह निकला की फासिस्ट योगी आदित्यनाथ की सरकार ने उनके खिलाफ दो एफआईआर दर्ज करा दी। लेकिन बंदा झुका नहीं। अडिग है। हर मुद्दे पर उनकी राय बहुत स्पष्ट रहती है। अब जैसे किसान आंदोलन के साथ वह खुलकर खड़े हैं। सूर्य प्रताप के लिए बहुत आसान था कि वो योगी का गुणगान करते और भाजपा में समाहित हो जाते। लेकिन उन्होंने वह रास्ता नहीं चुना। इस तरह सूर्य प्रताप सिंह इस समय राजनीति में न होकर भी राजनीति में हैं। हो सकता है कि कल को यूपी में कांग्रेस सत्ता में आये और वो कांग्रेस से जुड़ जायें लेकिन अभी उनके बारे में कोई भविष्यवाणी नहीं कर सकता कि वो किस पार्टी का दामन थाम सकते हैं। सूर्य प्रताप जब तक आईएएस रहे, उन्होंने एक बार भी ऐसा संकेत नहीं दिया कि रिटायरमेंट के बाद वो राजनीति में आ सकते हैं। यूपी-बिहार में ऐसे पूर्व आईएएस-आईपीएस भरे पड़े हैं जो अपने कार्यकाल में मशहूर रहे हैं लेकिन उन्होंने कभी राजनीति की तरफ रुख नहीं किया। बागपत से भाजपा सांसद और केंद्रीय मंत्री डॉ. सत्यपाल सिंह भाजपा में आने से पहले मुंबई के पुलिस कमिश्नर थे। मुंबई जैसे शहर का पुलिस कमिश्नर रहते हुए उन्होंने कभी भाजपा के समर्थन में कोई बयान नहीं दिया।

अब समय आ गया है कि सभी राजनीतिक दल नौकरशाही की इस बढ़ती महत्वाकांक्षा पर लगाम लगाने के लिए कुछ कानून-कायदा बनाये। ऐसा जो भी शख्स सिविल सर्विस से रिटायर हो, उसे कम से कम तीन साल तक चुनाव लड़ने या राजनीति में आने का अधिकार न हो। अगर कोई वीआरएस लेता है तो उस पर ऐसी रोक पांच साल तक रहनी चाहिए। अगर इस तरह के नियम नहीं बने तो धीरे-धीरे तमाम आईएएस-आईपीएस नौकरी में रहने के दौरान ही अपनी आगामी राजनीति प्लान कर लेंगे। अच्छे लोगों के आने से राजनीति साफ सुथरी रहती है लेकिन जब लोग प्लान करके राजनीति में आने लगेंगे तो यहां भी वो गलाजत नहीं मचायेंगे, इसकी गारंटी कौन दे सकता है?

(वरिष्ठ पत्रकार और राजनीतिक विश्लेषक)

यह आदमी कितना धूर्त है, उसके ताजा बयानों से उसकी धूर्तता का अंदाजा लगाया जा सकता है